प्राक्‌कथन

श्रीधवलसिंध्दांत प्रथम विभागके प्रकाशित होनेसे हमे जो आशा थी, उसकी सोलहों आने पूर्ति हुई। हमें यह प्रकट करते हुए अत्यन्त हर्ष और संतोष है कि मूडबिद्री मठको भेट की हुई शास्त्राकार और पुस्तकाकार प्रतियोंके वहां पहुचनेपर उन्हें विमानमें विराजमान करके जुलूस निकाला गया, श्रुतपूजन किया गया और सभा की गई, जिसमें वहांके प्रमुख सज्जनों और विद्वानोंद्वारा हमारी संशोधन, सम्पादन और प्रकाशन व्यवस्थाकी बहुत प्रशंसा की गई और यह मत प्रगट किया गया कि आगे इस सम्पादन कार्य में वहांकि मूल प्रतिसे मिलानकी सुविधा दी जाना चाहिये, नहीं तो ज्ञानावरणीय कर्मका बंध होगा। यह सभा मूडबिद्री मठके भट्टारकजी श्री चारुकीर्ति पंडिताचार्यवर्यकेही सभापतित्वमें हुई थी।

उक्त समारंभके पश्चात् स्वयं भट्टारकजीने अपना अभिप्राय हमें सूचित किया और प्रति मिलानकी व्यवस्थादिके लिये हमें वहां आनेके लिये आमंत्रित किया । इसी बीच गोम्म्टस्वामीके महामस्तकाभिषेकका सुअवसर आ उपस्थित हुआ। यद्यपि छुट्टियां न होनेके कारण हम उक्त महोत्सवमें सम्मिलित होनेकें लिये नहीं जा सके, किंतु हमारे कार्य मे अभिरुचि रखने और सहायता पहुचानेवाले अनेक श्रीमान् और धीमान् वहां पहुंचे और उनमेंसे कुछने मूडबिद्री जाकर ग्रंथराज महाधवलकी भी प्रतिलीप कराकर प्रकाशित करानेके लिये भट्टारकजी व पंचोकी अनुमति प्राप्त कर ली। समयोचित उदारता और सद्‌भावनाके लिये मुडबिद्री मठका अधिकारी वर्ग अभिनन्दनीय है और उस दिशामें प्रयत्न करनेवाले सज्जन भी धन्यवादके पात्र हैं। अब हम उस संबधमें पत्र-व्यवहार कर रहे हैं, और यदि सब सुविधाएं मिल सकी, जिनके लिये हम प्रयत्नशील है, तो हम शीघ ही मूडबिद्रीकी समस्त धवलादि श्रुतोंकी प्रतियोंकी (फोटोस्टाट मशीन या माइक्रो या माइक्रो फिल्मिंग मशीन व्दारा) प्रतिलिपिंयां कराकर ग्रंथराजका चिरस्थायी उध्दार करनेमें सफलीभूत हो संकेगे। इस महान कार्यके लिये समस्त धर्मिष्ठ और साहित्यप्रेमी सज्जनोंकी सहानुभूति और क्रियात्मक सहायताकी आवश्यकता है, जिसके लिये हम समाजपूर्ण का आवाहन करते है।

प्रथम विभागका प्रकाशनोत्सव ४ नवम्बर सन् १९३९ को किया गया था। तबसे आज ठीक आठ मास हुए हैं। इतने अल्पकालमे द्वितीय विभागका संशोधन सम्पादन होकर मुद्रण भी पूरा हो रहा हैं, यद्यपि कार्यमें अनेक कठिनाइयाँ अनेक उपस्थित होती रहती हैं। इस सफलतामें समाजकी सद्भावना और दैवी प्रेरणा बहुत कुछ कार्यकारी दिखाई देती है। यदि समय अनुकूल रहा तो आगे प्राय: वर्षमें दो भागोंका प्रकाशन करानेका प्रयत्न किया जायगा।

इस विभागके सम्पादनमे भी पूर्वोक्त सहयोग पूर्ववत् ही चलता आ रहा है, अर्थात् पं. फूलचंद्रजी शास्त्री स्थायी रुपसे सम्पादन कार्यमें हमारे साथ संलग्न रहे, तथा पं. हीरालालजी शास्त्री स्थायी रुपसे सम्पादन कार्यमें हमारे साथ संलग्न रहे, तथा पं. देवकीनन्दनजी शास्त्री और डॉ. आदिनाथजी उपाध्यासे हमें संशोधनमें यथावसर वांछित सहाय्य मिलता रहा। धवलकी जो प्रशस्तियां इस विभागके साथ प्रकाशित हो रही हैं, उनका सहारनपुरकी प्रतिसे अक्षरश: मिलान वीरसेवामंदीरके अधिष्ठाता पं. जुगलकिशोरजी ने करके भेजने की कृपा की। उन्ही प्रशस्तियोंके कनाडी पाठोंके संशोधनका अत्यंत कठिन कार्य डॉ. उपाध्येके सहयोगी, राजाराम कॉलेज, कोल्हापुरमें कानडीके प्रोफेसर श्रीयुत कुन्दनगारजी व्दारा किया गया है। वीरसेवामंदीरके पं. परमानन्दजी शास्त्रीने प्रस्तुत विभागमें आई हुई अवतरणगाथाओंके प्राकृत पंचसग्रहमें होने न होने की हमें सूचना दी। बीनाके पं. वंशीधरजी व्याकरणाचार्यने पृ. ४४१-४४३ पर आये हुए व्याकरण संबंधी कठिन प्रकरणपर अपनी सम्मति विस्तारसे हमें लिख भेजनेकी कृपा की। पं. महेंन्दकुमारजी न्यायाचार्यने इस भागके प्रथम फार्मक प्रुफ देखकर मुद्रण-संबधी अनेक सुचनांए देनेकी कृपा की। इस सब सहायतके लिये हम इन विव्दानोंके बहुत ही अनुग्रहीत है। और भी अनेक विद्वानोंने अपनी बहुमूल्य सम्मतियां हमे या तो व्यक्तिगत पत्र द्वारा या समालोचनाके रुपमें पत्रोमें प्रकाशित कराकर देनेकी कृपा की। उन सबसे भी हमने लाभ उठानेका प्रयत्न किया हैं, अतएव वे सब हमारे धन्यवादके पात्र हैं। उन सम्मतियों आदि परसे जो संशोधन या सुचनाए पथम खंडके विषयमें हमें आवश्यक प्रतीत हुई, उनका भी समावेश इस विभागके शुद्धिपत्रमें किया गया हैं। पाठक उससे प्रथम खंडमे उचित सुधार कर लें।

हमारे अनेक प्रेमी पाठकोंने कुछ सूचनाएं ऐसी भी भेजी थी जिनका खेद है, हम पालन करनेंमें असमर्थ रहे । इनमें एक सूचना तो प्राकृत अंशोंका या उनके कठिन स्थलोकां संस्कृत रूपान्तर देते जानेके सम्बंधमें थी । इसको स्वीकार न कर सकने का कारण हम प्रथम जिल्दके प्राक् कथन ही दे चुके हे और हमारा वह मत अब भी कायम है। दुसरी सूचना हमारे वयोवृध्द पाठकोंकी ओर से यह थी कि भाषान्तरका टाइप छोटा पडता है, उसे और भी बडा कर दिया जाय तो उन्हे पढने में सुविधा होगी। हम बहुत चाहते थे कि अपने वृध्द पाठकोंकी इस मुर्तिमान कठिनाई को दूर करे। किन्तु पाठक देखेंगे कि मूलके टाइपसे अनुवादका टाइप बहुत कुछ छोटा होते हुए भी उसमें मुलसे कहीं अधिक स्थान लगता है। अब हम यदि उसे और भी बडे टाइपमें ले तो हमारी निश्चित की हुई खंड-व्यवस्था और व्हाल्युममे बडी गडबडी उत्पन्न होती है। अतएव विवश होकर हमें अपनी पूर्व पध्दति ही कायम रखनी पडी। आशा है हमारे वृध्द पाठक प्रकाशन संबंधी इस कठिनाईको हमें क्षमा करेंगे।

इस विभागके संशोधनमें भी हमें अमरावती जैनमन्दिरकी प्रतिके अतिरिक्त आराके सिघ्दान्त भवन तथा कारंजाके महावीरबहमचर्याश्रमकी प्रतियोंका लाभ मिलता रहा तथा सहारनपुरकी प्रतिके जो कूछ पाठभेद पहलेसे नोट थे उनसे लाभ उठाया गया है। अतएव न सब प्रतियोंके अधिकारियोंके हम अनुगृहीत है।

श्रीमन्त सेठ लक्ष्मीचन्द्रजी और जैन साहित्योध्दारक फंडकी ट्रस्ट कमेटीक अन्य सब सदस्योंका इस कार्यको प्रगतिशील बनाये रखनेमें पूरा उत्साह है, और इस कारण हमें व्यवस्थामें किसी विशेष कठिनाईका अनुभव नही हुआ, बल्कि आगे सफलताकी पूरी आशा है।

युरोपीय महासमरके कारण इस खंडके लिए यथेष्ट कागज आदिका प्रंबंध करनेमें बडी कठिनाई उपस्थित हुई, जिसको हल करनेंमे हमारे निरन्तर सहायक पंडित नाथूरामजी प्रेमीका हमपर बहुत उपकार है।

सत्साहित्यकी कदर करनेवाले मर्मज्ञ पाठकोने प्रथम जिल्दका जो स्वागत किया है और उसके लिये हमारी ओर जो प्रशंसाके भाव व्यक्त किये है, उसके लिये हम उनकी गुणग्राहकताके कृतज्ञ है। पर हम यह फिर भी व्यकत कर देते हैं कि इस महान कठिन कार्यमें यदि हमें सचमुच कुछ सफलता मिल रही है तो उसका श्रेय हमें नही, किन्तु समाजकी उसी सद्‌भावना और समयकी प्रेरणाको है जो उचित कालमें कार्य किसी न किसीसे करा लेती है। इस सम्बंधमें हमारी तो, महाकवि कालिदासके शब्दोंमें, यही धारणा है कि -

सिध्यन्ति कर्मसु महत्स्वपि यन्नियोज्याः सम्भावनागुणमवेहि तमीश्वराणाम् ।
किंवाऽभविष्यदरुणस्तमसां विभेत्ता तं चेत्ससहस्त्रकिरणो धुरि नाकरिष्यत् ।।

हीरालाल जैन
किंग एडवर्ड कॉलेज,
अमरावती
१५/०७/४०